Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. XIV, Issue No. 1, October-2017, ISSN 2230-7540

आयुर्वेद में प्राकृतिक चिकित्सा का महत्त्व

Dr. Kamlesh*

Assistant Professor, Sanskrit Life Chavan Women's College, Asandha (Karnal)

----------X----------

प्राकृतिक चिकित्सा विशुद्ध आयुर्वेद है। प्रकृति का जब से आविर्भाव हुआ, तभी से प्राकृतिक चिकित्सा का भी आविर्भाव हुआ। आकाश, वायु, अग्नि, जल एवं पृथ्वी पंचतत्व समन्वित प्रकृति का कारण महत्तत्व या ईश्वर है। अतः प्रकृति–प्रसूत प्राकृतिक चिकित्सा ईश्वरीय चिकित्सा सिद्ध है। प्राकृतिक चिकित्सेतर चिकित्सा पद्धतियाँ एलोपेथी, होमियोपेथी, वर्तमान आयुर्वेद, यूनानी, मिश्रानी आदि बाद की समय–समय पर प्राकृतिक चिकित्सा से ही निकली हैं पर इनमें से प्रत्येक का रूप आजकल इतना विकृत हो चुका है कि वह पहचान में नहीं आता है और विश्वास ही नहीं होता है कि ये सभी चिकित्सा विधियाँ कभी प्राकृतिक चिकित्सा माता के गर्भ में थी। ऐसा इसलिए हुआ कि मनुष्य ने अपनी अहंकार वृत्ति से वशीभूत होकर इन्हें वैज्ञानिक ढांचे में ढालने के प्रयास में इनकी असली रूपरेखा को ही मिटा दिया और इनकी शक्लें भोंडी बना दी। अतः ये चिकित्सा प्रणालियाँ अपूर्ण मानव मस्तिष्क की उपज या मनुष्यकृत होने के कारण मानवी चिकित्सा पद्धतियों में बदल गई और ईश्वरीय चिकित्सा या प्राकृतिक चिकित्सा से बिल्कुल भिन्न हो गई। या यों कहिए कि प्राकृतिक चिकित्सा के अलावा आजकल जितनी भी चिकित्सा प्रणालियाँ है, उनका स्रोत तो प्राकृतिक चिकित्सा निश्चय ही है, किन्तु वे उच्छश्रृंख्ल और स्वतंत्र हो गई है, पथ–भ्रष्ट हो गई है, विकृत रूप में है और विशुद्ध नहीं है। इंग्लैंड निवासी डॉ॰ टी॰ उमर ने बताया की प्राकृतिक चिकित्सा ने जर्मनी में जन्म लेने के हजारों वर्ष पहले भारतवर्ष में जन्म ले लिया था। अतः उन्होंने आयुर्वेद में कहा कि आयुर्वेद शब्द का अर्थ है जीवन का तत्व ज्ञान और यही प्राकृतिक चिकित्सा का भी अर्थ है। आयुर्वेद को आयुर्विज्ञान कहना ठीक है, क्योंकि आयुर्वेद अथवा आयुर्विज्ञान से विज्ञान की उस शाखा का ज्ञान होता है, जिसका सम्बन्ध मनुष्य के जीवन–मरण से है। अर्थात् विज्ञान की वह शाखा जिसके द्वारा एक स्वस्थ व्यक्ति के स्वास्थ्य की रक्षा हो, रोगग्रस्त व्यक्ति को मुक्ति मिले, असुरों के कष्टों का निवारण हो तथा मनुष्य की आयु लम्बी हो, आयुर्विज्ञान अथवा आयुर्वेद हैं।

विशुद्ध आयुर्वेद या प्राकृतिक चिकित्सा सनातन चिकित्सा पद्धति ही नहीं अपितु जीवन–विज्ञान भी है। इस बात की पुष्टि चरक में सूश्रुतसंहिता 1/25 में की है–

सोऽनन्तपारं त्रिस्कन्धमायुर्वेदं महामतिः।

यथावदचिरात् सर्व बुबुधे तन्मना मुनिः। (चरक)

विशुद्ध आयुर्वेद का दूसरा लक्षण उसका अपौरुषेय होना है, अपौरुषेय अर्थात् मनुष्यकृत न होना। प्राकृतिक चिकित्सा निश्चय ही मनुष्यकृत नहीं है। अतः अपौरुषेय है यानि प्राकृतिक चिकित्सा ही विशुद्ध आयुर्वेद है।

विशुद्ध आयुर्वेद का तीसरा लक्षण उसका अनादि और अनन्त होना है। वेदों की भांति ही विशुद्ध आयुर्वेद भी अनादि और अनन्त है।

जीवन को कैसे जीना चाहिए सर्वप्रथम यह बताना या ज्ञान कराना। विशुद्ध आयुर्वेद का चौथा लक्षण है।

यजुर्वेद में मनुष्यों के लिए दिनचर्या, रात्रिचर्या तथा ऋतुचर्या का जो विस्तारपूर्वक वर्णन मिलता है, वह विशुद्ध आयुर्वेद या प्राकृतिक चिकित्सा विज्ञान ही है।

दिनचर्या निशाचर्या ऋतुचर्या यथोदिताम्।

आचरन पुरुषः स्वस्थः सदा तिष्ठति नान्यथा।

सब रोगों का मूल कारण शरीर स्थित विजातीय द्रव्य है। चिकित्सा विज्ञान के इस मूल सिद्धान्त को मानना और उसे मानते हुए तद्नुसार रोगों की चिकित्सा करना विशुद्ध आयुर्वेद का पांचवा लक्षण है।

रोगाः सर्वेऽपि मेंदऽग्नौ सतुरामुदराशिण च।

अजीर्णान्मलिनैश्चान्नैः जायन्ते मलसंचयात्। (वाग्भट्ट)

विशुद्ध आयुर्वेद में मिथ्या आहार–विहार ही समस्त रोगों का कारण माना जाता है। उसका सुधार ही उनका निवारण है। यह विशुद्ध आयुर्वेद का छठा लक्षण हैं।

अनात्मवन्तः पशुवद् भुज्जतेयेऽप्रमाणतः।

रोगानीकस्यते मूलमूजीर्णप्राप्नुवन्ति हि। माधव, 6/14

अति भोजनम् रोग मूलम्।

अर्थात् आवश्यकता से अधिक भोजन करना रोग की जड़ हैं।

विशुद्ध आयुर्वेद में मिथ्या आहार–विहार के अंतर्गत रोगों के तीन कारण माने जाते हैं– विषयों का अतियोग, अयोग तथा मिथ्या योग। मर्यादा से अधिक सेवन अतियोग है, बिल्कुल सेवन न करना अयोग है तथा विषयों का गलत ढंग से सेवन मिथ्या योग कहलाता हैं।

www.ignited.in

इस तरह शरीर की पांचों इन्द्रियां– नेत्र, जिह्वा, नासिका, कर्ण तथा धर्म के क्रमशः पांचों विषयों रूप, रस, गंध, शब्द तथा स्पर्श के सेवन की गलतियों के कारण ही रोग होते हैं।

तत्तद्वृद्धि कराहार विहारानिषेवणात्।

दोष–धातु–मलानां हि वृद्धिरूक्ताभिषेग्वरैः।

अर्थात् श्रेष्ठ चिकित्सक दोष बढ़ाने वाले आहार–विहार में ज्यादती करने से दोष, धातु और विजातीय द्रव्य की वृद्धि मानते हैं। यह माना जाता है कि आहार के समान कोई दवा नहीं है। केवल आहार–सुधार द्वारा रोगी मनुष्य को रोगमुक्त किया जा सकता है।

विशुद्ध आयुर्वेद में रोगों की एकताः अतः उपचार की एकतां रोगाद्वैताचिकित्साद्वैता' ;न्दपजल वि कपेमेंमे ंदक नदपज वि बनतमद्ध अथवा ;व्दमदमे वि कपेमेंमे ंदक वदमदमे वि जीमपत बनतमद्ध में विश्वास किया जा सकता है। यह सातवां लक्षण है।

त एवापरिसांख्येयाभिधमान भवन्ति हि

निदान वेदना वर्ण स्थान संस्थान नामभिः।

अर्थात् रोगों के अनगिनत नाम जो पड़ गए है, वह सिर्फ यह समझने के लिए कि पीड़ा शरीर के किस अंग में और किस तरह की है। रोग के निदान से स्थानभेद से, वेदना के प्रकार से तथा रंग से रोगों के नाम अलग–अलग पड़ जाते हैं। अन्यथा रोग एक ही होता है।

शरीर लाघव करं यद् द्रव्यं कर्म च पुनः

तल्लंघनमितिशेयं । (सूश्रुत)

अर्थात् उपवास से सभी प्रकार का कारण शरीर स्थित विजातीय द्रव्य शरीर में निकल आता है या पच–पचा जाता है, जिससे शरीर हल्का हो जाता है। इसलिए उपवास सभी रोगों का एकमात्र उपचार है।

चतुष्प्रकाशं संशुद्धिः पिपासा, मारूतातपो,

पाचनान्युपवासश्च व्यायामश्चेति लंघनम्। (चरक)

अर्थात् उपवास से मतलब शरीर संशोधन के सभी उपायों, नमन, एनिमा तथा अन्य प्राकृतिक उपचार से है।

याह्या दीर्ण शमयति नान्य व्याधिं करोति च।

सा क्रिया न तु या व्याधिं हरत्यन्यमुदीरयेत्।

विशुद्ध आयुर्वेद में किसी रोग के लिए औषधियों का विशेषकर उत्तेजक औषधियों का विधान न होना उसका आठवां लक्षण हैं। दूसरे शब्दों में पंचकर्मादि द्वारा रोगों को दूर करना ही वास्तविक चिकित्सा है और औषधियों द्वारा रोग–निवारण को चिकित्सा कहना गलत है। क्योंकि सभी रोगों का उपचार पंचकर्मी के प्रयोग करने से होता है, औषधियों के प्रयोग से नहीं। यथा–

भगवन् पच्च कर्माणि समस्तानि पृथक् तथा।

निर्दिष्टान्यामयानां हि सर्वेषामेव भेषजम्।

दोषजोऽस्त्यामयः कश्चिधस्यतानि भिषग्वर।

न स्युः शक्तानि शमने साध्यस्य क्रियया सतः। (चरक)

सुश्रूत के अनुसार चिकित्सा का अर्थ ही दोष संशोधन है। औषधि प्रयोग नहीं है। अर्थात् विशुद्ध आयुर्वेद में औषधियों की भांति ही शस्त्र चिकित्सा का भी स्थान होना या नाममात्र का स्थान होना, नवां लक्षण है। जिसमें कहा गया है कि रोग चाहे शस्त्र साक्ष्य क्यों न हो, उसकी सही चिकित्सा अस्त्र–प्रयोग नहीं अपितु दोष संशोधन (पंचकर्म) ही है।

पास के ही आरोग्यकारी उपादानों, अर्थात् सर्वत्र प्राप्त सहज प्राप्त तथा सर्वसुलभ रामनाथ (महतत्व) एवं पंच महाभूतों जो हमारे अस्तित्व के कारण है और जिनसे ही हमारा शरीर बना है, से समस्त रोगों की सफल चिकित्सा होना विशुद्ध आयुर्वेद का दसवां लक्षण है। यथा–

अथार्वी डे नमेतास्वेवाऽप्स्वन्विच्छेति। (गोपथ ब्राह्मण)

अर्थात् अब पास ही है, उसे ढूंढो। वह पास ही है। मतलब यह कि रोग होने पर उसकी दवा ढूंढने कहीं दूर न जाओं, अपितु वह पास ही है यानि भगवन्नाम, आकाश, वायु, अग्नि, जल, मिट्टी– ये छह चीजें जो मनुष्य जीवन के आधार है, पास ही है। इन्हीं में उस रोग की दवा ढूंढो और उसका ही प्रयोग करके स्वास्थ्य लाभ करों।

जिस चिकित्सा प्रणाली में यह प्रतिपादित हुआ हैं कि रोगी के रोग का निवारण स्वयं प्रकृति करती है। वैद्य, डॉक्टर या उनकी औषधियाँ नहीं, वैध, डॉक्टर का काम तो प्रकृति के रोग–निवारण के काम में केवल सहायता पहुँचाना होता है। उसी चिकित्सा प्रणाली को विशुद्ध आयुर्वेद कहते हैं अथवा विशुद्ध आयुर्वेद का यह 11 वां लक्षण है।

इस प्रकार आयुर्वेद में कहा है कि–

1. प्राकृतिक चिकित्सा का अर्थ है 'जीवन का तत्वज्ञान'।
2. महतत्त्व एवं पंचमहाभूत समन्वित प्राकृतिक चिकित्सा अपौरुषेय है मनुष्यकृत नहीं।
3. महतत्त्व एवं पंचमहाभूत समन्वित प्राकृतिक चिकित्सा अनादि और अनन्त है।
4. प्राकृतिक चिकित्सा, जीवन पद्धति का दूसरा नाम है। यह जीने की कला सीखाती है।
5. प्राकृतिक चिकित्सा में शरीर स्थित विजातीय द्रव्य के ही रोगों का मूल कारण माना जाता है।
6. प्राकृतिक चिकित्सा में शरीर स्थित विजातीय द्रव्य के ही रोगों का मूल कारण माना जाता है।
7. प्राकृतिक चिकित्सा में मिथ्या आहार–विहार से रोगों की उत्पत्ति तथा उनके सुधार से रोगों की निवृत्ति होती है।

8. प्राकृतिक चिकित्सा में रोगों की एकता, अतः उपचार की भी एकता स्वीकार की जाती है।

9. प्राकृतिक चिकित्सा में औषधियों विशेषकर उत्तेजक औषधियों का विधान नहीं है।

10. प्राकृतिक चिकित्सा के साधन, मात्र भगवान और पंचमहाभूत है।

11. प्रकृति ही चिकित्सक है, प्राकृतिक चिकित्सा का यह संपूर्ण सिद्धान्त है।

उपरोक्त के अतिरिक्त महर्षि चरक का सूत्र है–

हिताहितं सुखं दुःखमायुस्तस्यहिताहितम्।

मानं च तच्च यत्रोक्तमायुर्वेदः सउच्यते।।

अर्थात् हितमय, अहितमय, सुखमय, दुखमय, आयु तथा आयु के लिए हितकर एवं अहितकर द्रव्यगुण कर्म आयु का प्रमाण एवं लक्षण जिस शास्त्र में वर्णित होता है। उसे आयुर्वेद कहते हैं। आयुर्वेद का प्रयोजन भी हमें आचार्यों ने इस प्रकार बताया है–

स्वस्थस्य स्वास्थ्यरक्षणमातुरस्य विकार प्रशमनं च।

इति आयुर्वेदस्य प्रयोजनम्।

और ये ही प्राकृतिक चिकित्सा शास्त्र की परिभाषा एवं उसके उद्देश्य है।

Corresponding Author

Dr. Kamlesh*

Assistant Professor, Sanskrit Life Chavan Women's College, Asandha (Karnal)

E-Mail – kamal4u2016@gmail.com